International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 05, No. 01(III), January - March, 2023, pp. 152-157

शेखावाटी के सूरजगढ ठिकाने का इतिहास

डॉ. अवतार कृष्ण शर्मा*

प्रस्तावना

राजस्थान के शेखावाटी भू–भाग में झुन्झुनू जिलान्तर्गत जयपुर –लुहारू रेल मार्ग पर चिड़ावा से लगभग 12 किमी. उत्तर और शिक्षा नगरी के नाम से विख्यात पिलानी से दक्षिणी पूर्व में स्थित और राजस्थान भर में अपनी अनाज मण्डी के लिए विख्यात सूरजगढ़ रियासतकाल में जयपुर का एक उल्लेखनीय ठिकाना था। शेखावतों की साधानी शाखा से सम्बन्धित यह ठिकाना पंचपाना का ही एक हिस्सा था, जिसका विकास शार्दुलसिंह के सबसे छोटे पुत्र किशनसिंह के वंशजों ने किया।

वर्तमान शेखावाटी के झुन्झुनूं और नरहड़ के तत्कालीन नवाबी राज्यों को ध्वस्त कर शेखावत शिरोमणी शार्दुलसिंह ने एक विस्तृत भू–भाग पर अधिकार स्थापित किया। सन् 1742 में उसकी मृत्युपरान्त[1] उसके प्रभुत्व का सम्पूर्ण भू–भाग उसके जीवित पांच पुत्रों क्रमशः जोरावरसिंह, किशनसिंह, अखैसिंह, नवलसिंह और केशरीसिंह में बंट गया।[2] शार्दुलसिंह के इन पांच पुत्रों का राज्य पंचपाना के नाम से जाना जाता है। पंचपाना की स्थापना सन् 1742 ई. में हुई मानी जाती है।

पंचपानों में शार्दुलसिंह के ज्येष्ठ पुत्र बीकावतनी गर्भोद्भिज, जोरावरसिंह और उसके वंशजों ने भोड़की, चौकड़ी, कुमावास, ढूंढ़ार, सुलताना, इण्डाली,छऊ,उदावास, घोड़ीवारा,ख्याली,गांगियासर, घोड़ीवारा कलां, ओजटू, टांई, भोड़की, लूटू, बगड़, कालीपहाड़ी, सिरोही, बुडानिया, मोजास, मलसीसर, डाबड़ी धीरसिंह, मण्डेला, मारगसर, चनाणा में अपने स्थान स्थापित किये। शार्दुलसिंह की दूसरी पत्नी मेड़तणी जी से उत्पन्न पुत्रों किशनसिंह, अखैसिंह, नवलसिंह और केशरी सिंह में से किशनसिंह के उत्तराधिकारी खेतड़ी का प्रसिद्ध ठिकाना स्थापित करने वाले थे। इन्होंने हीरवा, सीगड़ा, बलरिया, अलसीसर, बदनगढ़, तोगड़ा, भुकाणा और अडूका में अपने अधिकार क्षेत्र स्थापित किये। शार्दुलसिंह के जीवित तृतीय पुत्र अखैसिंह की निःसंतान मृत्यु हो जाने के कारण उसके हिस्से के गांव उसके सहोदर भाईयों – किशनसिंह, नवलसिंह और केशरीसिंह में बंट गये। इस प्रकार पंचपाना वस्तुतः चर्तुपानों में ही शेष रह गया परन्तु वह पूर्व की भांति पंचपाना ही कहलाता रहा। शार्दुलसिंह के अन्य पुत्र नवलसिंह एवं उसके वंशजों ने नवलगढ़, मुकुन्दगढ़, मण्डावा, महनसर, परशरामपुरा, कोलिण्डा, दौरासर, कुमास, जखोड़ा, कुहाडु, पिलानी और भीमसर को अपना कर्म स्थल बनाकर विकसित किया। शार्दुलसिंह के अन्तिम पुत्र केशरीसिंह और उसके वंशजों द्वारा बसाये स्थानों में बिसाऊ, डूण्डलोद के साथ–साथ सूरजगढ़ भी शामिल है।

सूरजगढ़ ठिकाने के संस्थापकों के आदि पुरूष केशरीसिंह (1729–1768 ई.) ने पंचपाना स्थापना के बाद सन् 1750 ई. में डूण्डलोद के गढ़ का निर्माण करवाया।[3] आगे जाकर सन् 1755 ई. में उन्होने बिसाऊ में के गढ़ का निर्माण करवाया।[4] केशरीसिंह द्वारा स्थापित इन दो गद्दियों में से प्रथम ज्येष्ठ और द्वितीय कनिष्ठ मानी जाती थी। केशरीसिंह की चार पत्नियों से तीन पुत्र और एक पुत्री का जन्म हुआ। ज्येष्ठ पुत्र फतेहसिंह की विवाहपूर्ण मृत्यु हो जाने पर शेष दो पुत्र हनुवंतसिंह और सूरजमल को परम्परानुसार क्रमशः डूण्डलोद और बिसाऊ उत्तराधिकार में मिले। सूरजगढ़ नगर की स्थापना करने वाले पुरूष यही सूरजमल शेखावत थे।

* व्याख्याता, इतिहास, स्वामी विवेकानन्द राजकीय महाविद्यालय, खेतड़ी, झुंझुनूं, राजस्थान।

सूरजमल का जन्म 1755 ई. में हुआ था। इन्होंने तत्कालीन नरहड़ परगने के 'अड़िचा' नामक ग्राम में एक गढ़ का निर्माण करवाया।[5] सन् 1778 ई. (वि.स. 1834) में प्रारंभ करवाये गये किले में उन्होंने गढ़ के चारों ओर खाई खुदवा कर मिट्टी की परिवेष्टनी तैयार करवाई, एक कुआं और पूर्वी भाग में महल बनवाया।[6] उन्होंने एक तोरणद्वार और गोपीनाथ के मन्दिर का निर्माण भी करवाया। गढ़ के चारों कोनों में उच्च प्रदेश निर्मित कर बुर्जों का रूप दिया और समस्त नगर को चार द्वारों से युक्त ईटों के परकोटे से घेर दिया। कालान्तर में विख्यात हुई अनाज मण्डी की नीवं भी इन्होंने रखी। नगर में व्यापार वाणिज्य के प्रसार हेतु अनेक इमारतें बनवाई और महाजनों (डालमिया, केड़िया) को बसाने का कार्य किया। यह गढ़ और नगर इसके निर्माता के नाम पर सूरजगढ़ (सूर्यगढ़) विख्यात हुआ।

एक नगर और गढ़ के रूप में सूरजगढ़ वस्तुतः सूरजमल की ही देन है, परन्तु यह अभी भी अपने मुख्य स्थान बिसाऊ के अधीन ही माना जाता था, क्योंकि स्वयं सूरजमल बिसाऊ के अधिपति थे। सूरजमल योग्य निर्माता होने के साथ–साथ ख्यातनाम योद्धा भी थे। खेतड़ी अधिपति भूपालसिंह द्वारा लुहारू पर किये गये आक्रमण और विख्यात माण्डण युद्ध में इन्होंने योग्यतापूर्वक भाग लिया था।[7] जयपुर नरेश महाराजा प्रतापसिंह और महादजी सिन्धियां के मध्य 28 जुलाई 1787 ई. (वि.स1884) में तुंगा नामक स्थान पर हुए प्रसिद्ध युद्ध में शेखावतों की ओर से सूरजमल भी उपस्थित हुआ था, ने युद्ध में वीरता से लड़ते हुये वीरगति प्राप्त की।[8] कालान्तर में इनके पुत्र ठाकुर श्यामसिंह ने तुंगा में इनकी स्मृति में एक छतरी और कुए का निर्माण करवाकर कुछ भूमि पूजा हेतु दादू पथियों को दान में दी।

ठाकुर सूरजमल के आकस्मिक निधन (1787 ई.) के बाद उनका एक मात्र पुत्र श्यामसिंह 16 वर्ष की आयु में उनका उत्तराधिकारी बना। युद्ध में पिता द्वारा की गई सेवा के बदले जयपुर ने बिसाऊ को प्रतिवर्ष 100 झाड़शाही मुद्राओं का उपहार दिया, जो उनके नियत वार्षिक कर में से कम कर दिया जाता था। श्यामसिंह अपने जमाने के बड़े प्रसिद्ध कूटनीतिज्ञ रहे है। कूटनीतिक कलाबाजियों और निडर स्वभाव के कारण जयपुर दरबार में इनकी बड़ी धाक थी। राजकुमारी कृष्णा कुमारी प्रसंग में मारवाड़ नरेश की अप्रत्यक्ष सहायता करने के बावजूद इन्होंने जयपुर नरेश की कृपा प्राप्त की। यह उनकी नीति कुशलता, वाक्पटूता और निडर व्यक्तित्व का ही कमाल था। परन्तु वह दुःसाहसी भी था। क्षेत्र विस्तार एवं पुरानी अनबन को लेकर ये डूण्डलोद के अधिपति और अपने चाचा रणजीतसिंह और उसके पुत्र प्रतापसिंह की हत्या का कारक बने।[9] इससे उन्हें न केवल शेखावत सरदारों बल्कि बीकानेर नरेश का कोप भाजन भी बनना पड़ा। डूण्डलोद के ठाकुर रणजीतसिंह के जीवित बचे एक मात्र पुत्र शिवसिंह को हक दिलाने के लिए खेतड़ी नरेश अभय सिंह को कठोर कार्यवाही की चेतावनी भी देनी पड़ी।[10] बीकानेर नरेश रतनसिंह, जो डूण्डलोद के ठाकुर रणजीतसिंह की पुत्री राजकंवर के पति थे, ने सन् 1807 ई. में अमरचन्द सुराणा को श्यामसिंह के विरूद्ध भेजा।[11] अमरचन्द सुराणा ने सूरजगढ़ पर आक्रमण कर बहुत सा सामान लूट बीकानेर ले गये।[12] अन्ततः खेतड़ी एवं अन्य शेखावत सरदारों के दवाब के कारण शिवसिंह को सन् 1808 (सम्वत 1865) में जाकर हक प्राप्त हो सका।

शेखावाटी के इस शक्तिशाली व्यक्तित्व श्यामसिंह की 62 वर्ष की आयु में सन् 1833 ई. (वि.स. 1890) में मृत्यु हुई। इनके तीन पत्नियां थी। प्रथम पत्नी चम्पावतजी जो खेतड़ी नरेश बख्तावरसिंह की मौसी थी, से दो पुत्रियां पैदा हुई।[13] दूसरी रानी चौहान की निसंतान मौत हो गई। अन्तिम रानी बीकावतनी जी से दो पुत्र चैनसिंह और हम्मीरसिंह पैदा हुई।

श्यामसिंह की मृत्युपरान्त ज्येष्ठ पुत्र चैनसिंह को सूरजगढ़ और छोटे पुत्र हम्मीरसिंह को बिसाऊ का उत्तराधिकार प्राप्त हुआ। ठाकुर चैनसिंह ही पृथक् सूरजगढ़ ठिकाने के संस्थापक थे। इनका जन्म 1803 ई. में हुआ था। सूरजमल ने तो यहां गढ़ बनवाकर नगर की स्थापना की थी परन्तु एक शासन केन्द्र के रूप में सूरजगढ़ चैनसिंह के समय ही उभरा। इससे पूर्व यह बिसाऊ के अन्तर्गत ही एक उप केन्द्र रूप में रहा।

चैनसिंह सम्मानित शेखावत सरदार थे। ये अपनी कद काठी के कारण 'धींग' के नाम से विख्यात थे। इनके समय में खेतड़ी ठिकाने के कर्मचारियों द्वारा सूरजगढ़ के गांवों पर किये जा रहे अत्याचार को लेकर खेतड़ी ठिकाने से झगड़ा हो गया था। चैनसिंह सेना सहित चिड़ावा पर चढ़ आये। चिड़ावा के महाजनों द्वारा हर्जाने की पेशकश और बीच बचाव करने के बाद ही वे वापस लौटे।[14]

चैनसिंह की मृत्यु 1848 ई. (वि.स. 1905) में 45 वर्ष की आयु में हुई। चैनसिंह की मृत्यु उपरान्त इनका एक मात्र पुत्र गोविन्दसिंह (जन्म 1846 ई.) उत्तराधिकारी बना। गोविन्दसिंह के शासन काल में भारत की प्रसिद्ध 1857 की क्रान्ति हुई। देश–भक्ति का ज्वार अभी शेखावाटी में चेतन रूप नहीं ले पाया था। देशी रियासतों द्वारा अंग्रेजी सरकार की सहायता करने की नीति के अनुसार गोविन्दसिंह ने क्रान्ति को दबाने का कार्य किया। गोविन्दसिंह कुमाचन के ठाकुर के साथ विद्रोह को दबाने के लिए नारनौल जाकर अंग्रेजों के सहायक बने।[15] इनके समय गोरीर और म्हाड़ा के सीमा विवाद को लेकर खेतड़ी से विवाद पैदा हुआ। इन्हें अपने पुत्र चन्द्रसिंह के विद्रोह का भी सामना करना पड़ा। पिता से रूष्ट होकर चन्द्रसिंह ने अपने पिता के ठिकाने एवं बिसाऊ के गांवों में लूटमार शुरू कर दी। अन्ततः बिसाऊ ठाकुर हम्मीरसिंह द्वारा उसे मनाकर अपने पास रखने से ही मामला शान्त हुआ।

बिसाऊ ठाकुर अमरसिंह का कोई उत्तराधिकारी नहीं था। सूरजगढ़ सर्वाधिक निकट होने के कारण गोद जाने का प्रथम अधिकारी था। अपने पुत्र चन्द्रसिंह के गोदनामें को लेकर दोनों पक्षों में मनोमालिन्य हो गया। परिणामस्वरूप खिन्नता से वार्तास्थल बिसाऊ में ही ठाकुर गोविन्दसिंह की पक्षाघात से मौत हो गई।

गोविन्दसिंह की मृत्यु (सन् 1863 ई.,वि.स. 1920) के बाद सूरजगढ को शेखावतों की भाई बांट परम्परा का सामना करना पड़ा। ठाकुर गोविन्दसिंह ने दो विवाह किये थे। प्रथम पत्नी से जवाहरसिंह, हरिसिंह, चन्द्रसिंह और विजयसिंह तथा छोटी पत्नी से जीवनसिंह पैदा हुये। ज्येष्ठ पुत्र जवाहरसिंह गोविन्दसिंह के काल में ही मृत्युलोक को प्राप्त कर चुके थे और जीवनसिंह उनकी मृत्यु के समय मात्र दो वर्ष के थे। बिसाऊ ठाकुर हम्मीर सिंह गोविन्दसिंह का अन्तिम संस्कार कर उनके पुत्र चन्द्रसिंह के साथ सूरजगढ़ आये और यहां के शासनाधिकार को चारों पुत्रों में बांट दिया। कालान्तर में चन्द्रसिंह के बिसाऊ गोद चले जाने पर उसका भाग भी शेष तीन भाईयों में बांट दिया गया। इस प्रकार अपेक्षाकृत छोटे ठिकाने के भी और लघु टुकड़े हो गये। यह घटना गोविन्दसिंह की मृत्यु (1863 ई) के तुरन्त बाद ही हो गयी।

परन्तु यह स्थिति अधिक समय तक नहीं रही। सूरजगढ़ के भाग्य से शीघ्र ही शासनाधिकार फिर से एक हाथ में आ गया। जीवनसिंह के जीवित 4 पुत्रों में से चन्द्रसिंह गोद होकर बिसाऊ चले गये। हरिसिंह ज्वर से निःसंतान परलोक वासी हो गये। इनके स्थान पर चन्द्रसिंह (बिसाऊ) के पुत्र जगत सिंह का टीका किया गया। परन्तु बिसाऊ के ठाकुर चन्द्रसिंह की अकाल मृत्यु हो जाने के कारण जगत सिंह को बिसाऊ का राज मिला। इस प्रकार सूरजगढ़ अब विजयसिंह और जीवनसिंह के हिस्से रह गया। शीघ्र ही विजयसिंह की भी अकाल मौत हो गई।[16] कहा जाता है कि विजयसिंह षडयन्त्र का शिकार हुए। अपने भाई हरिसिंह के हिस्से के गांवों पर अधिकार स्वीकृति हेतु जयपुर गये विजयसिंह को जयपुर से लौटते वक्त जहर दे दिया गया। माना जाता है कि ये अत्यधिक मद्यपान के व्यसनी थे। खाने में बाजरे की रोटी कुछ छाछ से तो कुछ मदिरा के साथ खाते थे। इस प्रकार परम्परानुसार सूरजगढ़ फिर से एक सत्ता (जीवनसिंह) में केन्द्रित हो गई।

जीवनसिंह, गोविन्दसिंह के कनिष्तम् पुत्र थे जिनका जन्म 1861 ई (वि.स. 1918) में हुआ था।[17] सम्पूर्ण सूरजगढ़ का शासन सम्भालने के समय जीवनसिंह मात्र 16 वर्ष के थे। ये शान्त स्वभाव के आराम पसन्द व्यक्ति थे। इनके शासनकाल में स्वयं के विवाह एवं भवन निर्माण आदि पर काफी धन खर्च किया, पर शासन व्यवस्था को चुस्त दुरस्त करने के विषय में उद्यम नहीं किया गया। राजस्व प्राप्ति के साधनों पर निकम्मी व्यवस्था हावी थीं। परिणामस्वरूप शासन ऋण निरन्तर बढ़ता रहा। जीवनसिंह के स्वयं द्वारा देखभाल में उदासीनता के कारण मन्त्रियों की बराबर बदली से भी कार्य सिद्धि में कठिनाई आती रही। बढ़ते ऋण के दवाब के कारण जयपुर और सूरजगढ़ के मध्य कर बकाया को लेकर झगड़े की स्थिति पैदा हो गई।

कर भरण हेतु अपेक्षाकृत समृद्ध डूमोली गांव अधिकृत करने का उद्यम जयपुर द्वारा किया गया। जिसका विरोध जीवनसिंह ने किया। परन्तु जयपुर के कठोर रूख के कारण जीवनसिंह को जयपुर जाकर और महाराजा से माफी मांग कर झगड़ा निपटाना पड़ा।[18]

इस घटना से भी जीवनसिंह ने कोई सबक नहीं लिया। राजकीय ऋण में लगातार बढ़ोतरी होती रही। एक के बाद एक मन्त्रि बदले पर स्वयं प्रमादरत शासन कार्य से विमुक्त ही रहे। एक चतुर वेश्या गोखी को उन्होंने बड़ा मान दिया। गोखी ने मोहनी जाल में जीवनसिंह को कैद कर अपनी महत्ता ठुकरानी से भी अधिक बढ़ा ली।[19] राजकार्य में उसके अनुचित हस्तपेक्ष ने स्थिति को और बदतर बना दिया। इसी बीच डूण्डलोद के उत्तराधिकार का झगड़ा शुरू हो गया। सूरजगढ़ और बिसाऊ डूण्डलोद के निकट सम्बन्धी होने के कारण गोदनामें के लिए अपना दावा कर रहे थे। परन्तु पूर्व समझोते के कारण मलसीसर के हरनाथ सिंह का पक्ष मजबूत था। परिणामस्वरूप बिसाऊ और सूरजगढ़ ने शक्ति का प्रयोग किया जो जयपुर नरेश की ईच्छा के विरूद्ध था। अन्ततः जयपूर की शक्ति के आगे विरोधियों को झुकना पड़ा। सजा के रूप में जीवनसिंह को जयपुर प्रवास करना पड़ा। सूरजगढ़ के मुख्य कार्यकारी अब्दुला खां सहित बिसाऊ के कई अधिकारियों को भी सजा दी गई।

जीवनसिंह के जयपुर प्रवास के दौरान सूरजगढ़ के राज कार्य संचालन हेतु जयपुर नरेश ने पंण्डित विश्वेश्वरनाथ चौबे को कार्यकारी बनाकर भेजा। चौबे जी ने बड़ी योग्यतापूर्वक कार्य करते हुये राज व्यवस्था को दुरस्त करना शुरू किया। योग्य प्रबन्धन से राजस्व संग्रहण में प्रगति हुई और पिछले 35 वर्षों से ऋण से दबा आ रहा सूरजगढ़ उऋण हुआ। डूण्डलोद के विवाद की शान्ति पर जीवनसिंह को वापस सूरजगढ़ जाने दिया गया। जीवनसिंह के आते ही पूर्व मन्त्री अब्दुलाखां भी वापिस हजूरी में आ गया। नवाब इसेखां धामलावासवाले को राज का कार्यकारी बनाया गया। पुराना राज–पाट और कुचक्र फिर शुरू हो गया। बढ़ती उम्र का प्रभाव जीवनसिंह पर पड़ने लगा। नेत्र ज्योति कमजोर हो गई। शरीर भी शिथिल रहने लगा। उधर अब्दुलाखां और इसेखां ठाकुर चहेती गोखी को प्रसन्न रख मनचाहा करते रहे। ऐसी दारूण अवस्था में संतान रहित जीवनसिंह का देहान्त हो गया। अपने सम्पूर्ण काल में वे सूरजगढ़ पर बौझ बने रहे पर जाते–जाते एक अच्छा कार्य कर गये। सूरजगढ़ की दयनीय अवस्था, चापलूसों के गिरोह और जीवनसिंह की असहायता को बिसाऊ ठाकुर ने महसूस कर जीवनसिंह को हितवृद्धि हेतु मन्त्रणा दी। परिणामस्वरूप जीवनसिंह ने जयपुर जाकर अपनी मृत्युपरान्त बिशनसिंह के पुत्र रघुवीर सिंह को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करने का अधिकार जयपुर नरेश से प्राप्त कर लिया। जाते–जाते एक सूकार्य वो करते गये। इस प्रकार हीन अवस्था में सूरजगढ़ को छोड़ सन् 1925 ई. (वि.स. 1972 फाल्गुन) में जीवनसिंह स्वर्गवासी हुए। उनकी मृत्यु के समय उनके उत्तराधिकारी रघुवीरसिंह बिसाऊ में थे। उनकी अनुपस्थिति में ही जीवनसिंह का अन्तिम संस्कार कर दिया गया। कहा जाता है कि उनकी मृत्युपरान्त उनके निजी आभूषण तक चापलूस लोग पार कर ले गये।

ठाकुर जीवनसिंह की मृत्यु के बाद उनकी इच्छानुसार सूरजगढ़ का शासन सूत्र बिसाऊ के उत्तराधिकारी रघुवीरसिंह के हाथ में आ गया। इस प्रकार ठाकुर चैनसिंह के समय अलग हुये बिसाऊ और सूरजगढ़ को दैव ने फिर से एक शासनान्तर्गत कर दिया। ठाकुर चैनसिंह से लेकर जीवनसिंह के काल का लगभग 82 वर्षो का समय सूरजगढ़ के स्वतन्त्र ठिकाने काल माना जा सकता है। ठाकुर रघुवीरसिंह को 1939 ई (वि.स.1996) में बिसाऊ के साथ–साथ सूरजगढ़ का शासन भी प्राप्त हुआ। रघुवीरसिंह ने जयपुर सेना के मानसिंह गार्ड में सैन्य शिक्षा प्राप्त कर मेजर की उपाधि प्राप्त की थी। ये सूरजगढ़ के अन्तिम शासक थे। भारत के स्वतंत्र हो जाने के बाद 1954 ई. में यह ठिकाना भी राजस्थान के रियासती एकीकरण द्वारा राजस्थान प्रान्त का अंग बन गया।

सूरजगढ़ अपेक्षाकृत छोटा ठिकाना था जो शेखावतों की भाई बांट परम्परा का स्वभाविक परिणाम था। इस ठिकाने का प्रथक् निशान नकारा, बलम एवं सोटा था। इसके पास एक अंग्रेजी बैण्ड, एक हस्ति हौदा, एक गंगाजमनी खरशल, एक पालकी, एक रथ भी था। सैन्य क्षेत्र में खास अश्वारोही, सामन्त, कायमखानी अश्वारोही, नजुबु की पलटन, नायकों का बेड़ा था। इसके अधीन लगभग 3 लाख 75 हजार बीघा

भूमि थी जिसका कुल क्षेत्रफल लगभग 131 वर्गमील था। ठिकाने की कुल आमदनी लगभग एक लाख रुपये वार्षिक थी। राजधानी सूरजगढ़ के अलावा इसके क्षेत्र सिंघाना और झुन्झुनूं क्षेत्रों में बटे हुये थे। प्रशासनिक व्यवस्था हेतु राजधानी सूरजगढ़, एक तहसील और तीन परगने थे। इसके अधीन तीन थाने थे, जो सिंघाना, झुन्झुनूं और उदयपुरवाटी में स्थित थे। राज की पैरवी करने के लिए अन्य ठिकानों की तरह एक वकील निजामत शेखावाटी, झुन्झुनूं में और एक जयपुर रहता था। अनाज मण्डी के रूप में बड़ा विख्यात रहा है। इस कारण अनेक महाजन परिवारों ने इसे व्यापार का कर्म स्थल बनाकर सींचा। जो आज भारत के व्यापार जगत में अपना मूल्यवान योगदान दे रहे हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सी डब्लु विल्स, ऐ रिपोर्ट ऑन द लैण्ड टेन्यौरस एण्ड स्पेसियल पॉवर्स ऑफ सर्टेन ठिकानेदार्स ऑफ द जयपुर स्टेट, पैरा 79, –पं.रामचन्द्र भगवतीदत्त शास्त्री, शेखावाटी प्रकाश, दशम अध्याय, पृष्ठ 12,43.
2. कर्नल टॉड ने शार्दुल सिंह शेखावत द्वारा अपनी मृत्यु पूर्व ही अपनी भूमि अपने 5 पुत्रों में बांटने के विषय में लिखा है (टॉड – जिल्द 3, पृष्ठ 1424–25)। पंचपाना के इजारे का प्रथम उल्लेख शार्दुल सिंह शेखावत की मृत्यु (1742 ई.) के बाद 1744 ई. के मिलता हैं (विल्स रिपोर्ट पैरा 79)। पंण्डित रामचन्द्र भगवती दत्त शास्त्री ने शार्दुल सिंह की मृत्युपरान्त उसके भू–भागों का पांच पुत्रों में विभाजन होना बताते है (शेखावाटी प्रकाश, दशम अध्याय, पृष्ठ 13) सम्भवत :सम्भावित झगड़े को रोकने के लिए शार्दुलसिंह ने अपने जीते जी अपनी भूमि का बंटवारा पांचों पुत्रों में कर दिया था, जो उसकी मृत्यु के बाद प्रभावी हुआ। इस प्रकार की व्यवस्था शेखावाटी में आज भी देखी जा सकती है। चूंकि शार्दुलसिंह की मृत्यु के तुरन्त बाद बकाया वसूली निमित जयपुर ने उसके भू–भाग को खालसा कर लिया था (विल्स रिपोर्ट) जो 1744 ई. में छोड़ा गया। इसी कारण पंचपाना के इजारे का प्रथम उल्लेख 1744 ई. के मिलते हैं। (विल्स कलेक्सन कागजाता पंचपाना सिंघाना नं. 134–135) अतः पंचपाना शार्दुल सिंह की मृत्यु के तुरन्त बाद (सन् 1742, वि.स.1799) में अस्तित्व में आ गया होगा।
3. रघुनाथ सिंह शेखावत, शार्दुल वंश प्रकाश, पृष्ठ 391.
4. कर्नल लोकेट ने ठाकुर केशरी सिंह द्वारा झुन्झुनू परगने के एक छोटे से गांव न्याण ;छलींदद्ध में बिसाऊ के किले और नगर की स्थापना होना बताया है (लोकेट रिपोर्ट, पृष्ठ 57.)। शार्दुल वंश प्रकाश बिसाले की ढाणी के स्थान पर गढ़ निर्माण और ढाणी के नाम पर बिसाऊ नामकरण के विषय में बताता है (शार्दुल वंश प्रकाश, पृष्ठ 391)।
5. द जर्नल ऑफ ले. कर्नल लोकेट, पेज 27
6. पंण्डित रामचन्द्र भगवती दत्त शास्त्री,शेखावाटी प्रकाश, अध्याय 14, पृष्ठ 3.
7. मेघराज बारहठ कृत एवं श्री शोभाग्य सिंह शेखावत संग्रहित,सादूल कूल रूपक, (पाण्डुलिपि) छंद 200 एवं 234.
8. पंण्डित रामचन्द्र भगवती दत्त शास्त्री,शेखावाटी प्रकाश, अध्याय 15, पृष्ठ 4.
9. द जर्नल ऑफ ले. कर्नल लोकेट, पेज 33, शेखावाटी प्रकाश, अध्याय 11, पृष्ठ 11.
10. अवतार कृष्ण शर्मा, खेतड़ी ठिकाने का इतिहास एवं योगदान, शोध प्रबन्ध, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, पृष्ठ 85.
11. पं.रामचन्द्र भगवती दत्त शास्त्री, शेखावाटी प्रकाश, अध्याय 15, पृष्ठ 1.
12. गोरीशंकर हीराचन्द ओझा, बीकानेर राज्य का इतिहास, भाग–2, पृष्ठ 392.
13. द जर्नल ऑफ ले. कर्नल लोकेट, पेज 61
14. पं.रामचन्द्र भगवती दत्त शास्त्री, शेखावाटी प्रकाश, अध्याय 15, पृष्ठ 7.

15. पं.रामचन्द्र भगवती दत्त शास्त्री, शेखावाटी प्रकाश, अध्याय 15, पृष्ठ 7.

16. जीवनसिंह के भाई हरिसिंह की मृत्यु वि.स. 1934 (1877ई.) में हुई थी। (शेखावाटी प्रकाश अध्याय 15, पृष्ठ 8) हरिसिंह के गांवों के उत्तराधिकार प्राप्ति हेतु जयपुर गये विजयसिंह की लौटते समय मौत हुई थी। जीवनसिंह ने 38 वर्ष शासन किया। इस प्रकार विजय सिंह सम्भवत 1934 ई. में मृत्युलोक को प्राप्त हुए और इसी समय जीवनसिंह सूरजगढ के एकछत्राधिपति बने।

17. पं.रामचन्द्र भगवती दत्त शास्त्री, शेखावाटी प्रकाश, अध्याय 15, पृष्ठ 10.

18. पं.रामचन्द्र भगवती दत्त शास्त्री, शेखावाटी प्रकाश, अध्याय 15, पृष्ठ 9.

19. तत्कालीन अव्यवस्था और राजकार्य में वैश्या गोखी का प्रभाव कितना बढ़ गया था, इसका अनुमान अभी हाल तक वहां प्रचलित कहावत 'सूरजगढ़ में रहणों है तो गोखी न बुआ कहणो होगों' से लगाया जा सकता है।

❖◆❖